२६

महात्मा गाँधी

प्रस्तावना

महात्मा गाँधी हिन्दू परम्परा और संस्कृति के महान् दार्शनिक हैं। यदि कभी वेद, उपनिषद् और गीता किसी एक व्यक्ति के कार्यकारी सिद्धान्त रहें है, तो वह महात्मा गाँधी थे, जहाँ उन सभी ने पूर्ण अभिव्यक्ति तथा प्रकाशन प्राप्त किया। उस महान् आत्मा का आविर्भाव अतीत की धार्मिक हिन्दू परम्पराओं से अन्धकार में टटोलते हुए तथा नैराश्य से अत्यधिक परिवेष्टित मानव जाति को प्रकाश दिखलाने के लिए हुआ। उनकी मृत्यु के दिन 'द लन्दन टाइम्स' के सम्पादकीय लेख ने लिखा, "कोई अन्य देश नहीं, सिर्फ़ भारत, तथा कोई अन्य धर्म नहीं, सिर्फ़ हिन्दू धर्म, महात्मा गांधी को जन्म के सकता था। यह सत्य है कि हम गाँधी में उन गुणों का अवलोकन करते हैं जिन्हें हम भारत की विशिष्टता मानते हैं। वे ईश्वर-प्रेरित गुण जो भारत की मुख्य विशेषताएँ हैं।"[1]

महात्मा गाँधी कर्मयोगी थे। वे कर्मठ व्यक्ति थे। उनके अनुसार, नैतिक कार्य का एक लघु अंश भी सहस्रों रहस्यात्मक विचारों तथा आध्यात्मिक सम्भावणों के तुल्य है। कर्म के जाँच द्वारा ही मनुष्य की परीक्षा होती है। आत्म-बलिदान, अहिंसा, भ्रातृत्व, त्याग और मानव प्रेम व्यक्ति के दर्शन के आधार प्रस्तुत करते हैं। दर्शन का आधार आचरण है। व्यक्ति के आचरण से ही हम उसके दर्शन और धर्म का अनुमान कर सकते हैं।

---

१. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, महात्मा गाँधी, एसेज् एण्ड रिफ्लेक्सन्स आँन हिज़ लाइफ एण्ड वर्कस, द्वितीय संस्करण की भूमिका, जैको पब्लिशिंग हाउस, महात्मा गाँधी रोड, बम्बई—१।

Scanned by TapScanner

२७

ईश्वर

ईश्वर के अस्तित्व-सम्बन्धी प्रमाण

महात्मा गाँधी एक विलक्षण तार्किक व्यक्ति थे। वे ईश्वर के अस्तित्व के सम्बन्ध में अनेक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। उनकी युक्तियाँ प्रशिक्षित दार्शनिकों की युक्तियों के समान हैं। ईश्वर में उनका अविचल विश्वास था। वह कहते हैं, "लेकिन मैं तुम्हें इतना कह सकता हूँ, कि मैं उसके (ईश्वर के) अस्तित्व के सम्बन्ध में इस तथ्य की अपेक्षा कहीं अधिक संशयहीन हूँ कि तुम और मैं इस कमरे में बैठे हुए हैं। मैं इसे भी प्रमाणित कर सकता हूँ कि मैं, वायु और जल के बिना जीवित रह सकता हूँ, लेकिन उसके बिना नहीं। तुम मेरी आँखों को निकाल ले सकते हो, लेकिन उससे मेरी मृत्यु नहीं होगी। लेकिन ईश्वर में मेरे विश्वास को नष्ट कर दो और मैं मृत हूँ।"[1] महात्मा गाँधी को ईश्वर के अस्तित्व एवं उसकी शक्ति में दृढ़ आस्था थी। वह ईश्वर के अस्तित्व के लिए निम्नांकित युक्तियाँ देते हैं।

१ कार्य-कारण सम्बन्धी प्रमाण।

२ उद्देश्य-मूलक प्रमाण।

३ नैतिक प्रमाण।

४ आप्तवचन और इतिहास-विषयक प्रमाण।

५ ईश्वर की व्यक्तिगत् साक्षात् अनुभूति।

६ बहुमत का विश्वास।

७ व्यवहारवादी प्रमाण।

---

१. यंग इन्डिया, ४ अक्टूबर, १९२८.

Scanned by TapScanner

१. कार्य-कारण सम्बन्धी प्रमाण :

प्रत्येक वस्तु का अस्तित्व विभिन्न कारणों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। वस्तु का उत्पादन उसके उपादान कारण पर निर्भर करता है। इस संसार के लिए भी उसका कारण अवश्य होना चाहिए। अतएव, इस संसार का सर्वोच्च कारण ईश्वर होना चाहिए। महात्मा गांधी इस युक्ति को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, "यदि हमारा अस्तित्व है, यदि हमारे माता-पिता तथा उनके माता-पिता का भी अस्तित्व रह चुका है, तब इस सम्पूर्ण सृष्टि के पिता में विश्वास करना भी युक्तिसंगत है।"[1] यदि कोई कहता है कि वह ईश्वर को उसी तरह नहीं देखता है, जिस तरह वह अपने माता-पिता को देखता है, तो उसके तर्क का कोई महत्त्व नहीं है। अनेक अज्ञानी लोगों ने अपने शासक को नहीं देखा है, न ही वे यह जानते हैं कि वह कैसे तथा क्यों शासन करता है, तब भी वे जानते हैं कि कोई व्यक्ति उन पर शासन करता है तथा उनके ऊपर स्वामित्व रखता है। उसी तरह, ईश्वर को हम अपने सीमित मन के द्वारा नहीं देख सकते हैं, लेकिन फिर भी उसका अस्तित्व हो सकता है। महात्मा गांधी स्पष्ट रूप से इस तथ्य को एक उदाहरण द्वारा व्याख्या करते हैं, "पिछले साल मैसूर में अपनी यात्रा के समय, मैं अनेक गरीब ग्रामीणों से मिला और मैंने जाँच करने पर पाया कि वे नहीं जानते थे कि मैसूर पर कौन शासन करता था। उन लोगों ने सिर्फ इतना ही कहा कि कोई राजा उस पर शासन करता है। यदि इन गरीब लोगों का शासक के विषय में ज्ञान सीमित है, तो मैं जो ईश्वर से उसकी अपेक्षा अनन्त-रूप से क्षुद्रतर हूँ, जितना कि वे अपने शासक की अपेक्षा हैं, आश्चर्यचकित होने की आवश्यकता नहीं है यदि मैं राजाओं के राजा, ईश्वर की उपस्थिति को नहीं समझ सकता हूँ।"[2]

२. उद्देश्य-मूलक प्रमाण :

विश्व में अन्तर्निहित एकता, प्रयोजन, पूर्ण समायोजन, व्यवस्था और प्रत्येक वस्तु को शासित करने वाला एक नियामक है। संसार के सभी क्रिया-कलाप किसी लक्ष्य से निर्देशित होते हैं। हम जगत् में एक पूर्ण व्यवस्था तथा प्रबन्ध देखते हैं। गांधी जी पूछते हैं, संसार में ये सभी बातें कैसे संभव है? यदि प्रकृति अचेतन है, इसकी क्रियाएँ विचार शून्य हैं, तब

---

१. यंग इन्डिया, ११ अक्टूबर, १९२८, पृष्ठ-३४०.
२. वही.

Scanned by TapScanner

संसार को चरम पूर्णता की ओर निर्देशित करने के लिए कोई प्रज्ञावान्, सर्वोच्च पुरुष अवश्य होना चाहिए। संसार को नियंत्रित और निर्देशित करने के लिए ईश्वर के हाथ वहाँ अवश्य होने चाहिए। यदि विश्व में अव्यवस्था नहीं है, तो यह ईश्वर के कारण ही है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "विश्व में सुव्यवस्था है। प्रत्येक वस्तु तथा प्रत्येक प्राणी जिसका अस्तित्व है या जो जीवित है, उसे संचालित करने वाला एक अपरिवर्तनीय नियम है। यह निरुद्देश्य नियम नहीं है; क्योंकि कोई निरुद्देश्य नियम जीवित प्राणियों के आचरण को संचालित नहीं कर सकता है.....वह नियम जो सभी के जीवन को संचालित करता है, ईश्वर है। नियम तथा नियम को देनेवाला एक है।"[1]

ईश्वर अन्तर्निहित तथा अप्रकट रूप से सर्वत्र है। यदि हम ईश्वर के अस्तित्व तथा उसके नियम का निषेध भी करें, फिर भी संसार में सार्वभौम नियम है जो जीवन तथा विश्व को नियमित करता है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "मैं अस्पष्ट रूप से निश्चय ही देखता हूँ कि मेरे चारो ओर प्रत्येक वस्तु एवं सतत् परिवर्तनों में अन्तर्निहित एक जीवन शक्ति है, जो परिवर्तन रहित है, जो सभी को एक साथ रखती है, जो सृष्टि करती है, विघटित करती है तथा पुनः रचना करती है। वह अनुप्राणित करने वाली शक्ति या भावना ईश्वर है।"[2]

३. नैतिक प्रमाण :

संसार, नैतिक सिद्धान्तों के अनुसार नियमित होता है। वह अदृश्य शक्ति पापियों को दंड देती है, और सदाचारियों को पुरस्कृत करती है। लेकिन यह न्याय कौन करता है ? इस विस्तृत संसार में न्याय करने वाला ईश्वर के अतिरिक्त और दूसरा कोई नहीं हो सकता है। कोई विशिष्ट परिवार, परिवेश, अवस्था और सामाजिक स्तर में किसी व्यक्ति का जन्म हमारे नैतिक या अनैतिक कार्यों पर निर्भर करता है। प्रतिफल का सिद्धान्त हम सभी में स्वाभाविक रूप से क्रियान्वित है। हमारी आनुवांशिकता तथा जन्मजात् गुण हमारे अपने कार्यों पर निर्भर करते हैं। प्रश्न है, ये सब क्यों घटित होता है ? सत्य सदैव अशुभ पर विजयी क्यों रहता है ? बुरे कार्य करने वाले मानसिक कष्ट तथा यातना क्यों सहन करते हैं ? पुण्यात्मा लोग सदैव शान्ति और सुख

---

१. यंग इन्डिया, ११ अक्टूबर, १९२८, पृष्ठ—३४०.
२. वही.

में क्यों रहते है? संसार में नैतिक व्यवस्था क्यों है? ये सब स्पष्टतः एक सर्वोच्च शक्ति पर निर्भर है, जो संसार को नियमित करता है, सदाचारियों को पुरस्कार देता है और पापियों को दंडित करता है।

४. आप्तवचन तथा इतिहास-विषयक प्रमाण :

इतिहास में ऐसे ऋषि तथा पैगम्बर हो चुके है जिन्हें ईश्वर की साक्षात् अनुभूति हुई है। प्लॉटिनॅस, संत आगस्तिन, स्वामी रामकृष्ण तथा अनेक अन्य लोगों ने ईश्वर का दर्शन और साहचर्य प्राप्त किया है। उनका प्रमाण सभी देशों और स्थानों में पैगम्बरों और ऋषियों की अटूट परम्परा के द्वारा प्राप्त अनुभूतियों में पाया जाता है। महात्मा गाँधी विभिन्न युगों के पैगम्बरों की अनुभूतियों के आधार पर ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करते है।

५. बहुसंख्यक लोगों के द्वारा ईश्वर में विश्वास :

महात्मा गाँधी परिहास पूर्वक कहते हैं कि ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण इस तथ्य पर निर्भर, करता है कि संसार में करोड़ों मनुष्य उनकी सत्ता में विश्वास करते हैं। संसार में अधिकांश लोग ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करते है, अतएव इसे अवश्य सत्य स्वीकार किया जाना चाहिए। हम एक प्रजातांत्रिक युग में रह रहे हैं जिसमें बहुमत ही सत्य का निर्णय करती है। यदि देश में प्रत्येक बात बहुसंख्यक लोगों के द्वारा निर्णित होती है, तो ईश्वर के अस्तित्व का विषय भी अवश्य ही बहुमत पर छोड़ दिया जाना चाहिए। संसार में आस्तिकों की संख्या नास्तिकों से अपेक्षाकृत अधिक है। इसीलिए, हमें उसके अस्तित्व को अवश्य ही सत्य मान लेना चाहिए।

६. ईश्वर का व्यक्तिगत् साक्षात् अनुभव :

महात्मा गाँधी लिखते हैं कि उन्हें ईश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति हुई है। वह ईश्वरीय शक्ति की उपस्थिति को अनुभव करते हैं, यद्यपि वह उसे देखते नहीं है। वह उसकी उपस्थिति को अनुभव करते हैं, लेकिन वह उसे देखते नहीं हैं। वह कहते हैं कि सभी मनुष्य ईश्वर के स्पर्श को अनुभव करते हैं लेकिन वे उसे देखते नहीं हैं। महात्मा गाँधी लिखते हैं कि उनका ईश्वर की अनुभूत ज्ञान उन्हें उसके अस्तित्व का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रदान करता है। वह लिखते हैं, एक अवर्णनीय रहस्यमय शक्ति है जो प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है। मैं इसे अनुभव करता हूँ। यद्यपि मैं इसे देखता नहीं हूँ। यह

Scanned by TapScanner

वही अद्भुत शक्ति है जो अपने को अनुभव कराता है तथा फिर भी सभी प्रमाण को चुनौती देता है, क्योंकि वह उन सभी से इतना भिन्न है जिन्हें मैं अपनी इन्द्रियों से देखता हूँ। वह इन्द्रियों के परे है।"[1]

७. व्यवहारवादी प्रमाण :

किसी व्यक्ति के अस्तित्व का प्रमाण परिस्थितियों के प्रति उसके प्रत्युत्तर में निहित है। यद्यपि ईश्वर अदृश्य रहता है, उसकी लौकिक क्रियाएँ प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ती हैं। सभी संकटावस्था में, नीतिपरायणता के प्रयास में, ईश्वर योगदान देता है और मनुष्यों को विजय प्राप्त करने में सहायता करता है। सत्य, अहिंसा, सत्यवादिता, साधनों की पवित्रता, ब्रह्मचर्य, ईमानदारी, इत्यादि, के प्रयोगों में उन्होंने पाया कि नैतिक तथा धार्मिक मार्ग पर चलकर उन्हें सदैव विजय प्राप्त हुआ है। डा० धीरेन्द्र मोहन दत्त गाँधी जी के ईश्वर के अस्तित्व-विषयक प्रमाण का इस तरह उल्लेख करते हैं, "हमलोग किसी दूसरे व्यक्ति में 'आत्मा' के अस्तित्व के विषय में उससे प्राप्त मन की प्रतिक्रियाओं के द्वारा जान सकते हैं। वही बात ईश्वर के अस्तित्व के ज्ञान के विषय में भी सत्य है। अपनी आस्था के प्रति प्रत्युत्तर के द्वारा गाँधी ने ईश्वर में अपने विश्वास को दृढ़ बनाया।"[2]

ईश्वर

महात्मा गाँधी परम्परागत् वैष्णव परिवार के थे। उनके माता-पिता के धार्मिक परिवेश ने उनमें सर्वज्ञ और सर्वशक्तिशाली ईश्वर में दृढ़ निष्ठा उत्पन्न किया। वह ईश्वर की अलौकिक शक्ति में विश्वास करते थे, जो विश्व की सभी प्रक्रियाओं को नियंत्रित तथा निर्देशित करती है। वह स्वर्ग में निवास करने वाली कोई शक्ति नहीं है, अपितु हमारे अन्दर नजदीक रहने वाली शक्ति है।

महात्मा गाँधी ईश्वर को मूर्त्त व्यक्ति के रूप में मानते हैं जो हमारी प्रत्येक क्रिया को देखता है। वह हमारी आन्तरिक आवाज़ है। ईश्वर संसार को संचालित करता है। हम संसार में नैतिक व्यवस्था पाते हैं। ईश्वर के नैतिक शासन तथा कार्य-प्रणाली में गाँधी जी की दृढ़ आस्था थी। वह

---

१. यंग इन्डिया, ११ अक्टूबर, १९२८, पृष्ठ-३४०.
२. द् फिलासाफी आफ महात्मा गाँधी, द् यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन प्रेस, मैडिसन, प्रथम संस्करण, १९५५, पृष्ठ-४२.

तुम्हारी शर्तों के अनुसार नहीं।"[1] "मुझे अपने एकमात्र मार्ग-दर्शक के रूप में ईश्वर का साथ देना चाहिए। वह एक ईर्ष्यालु ईश्वर है। वह किसी को भी अपने स्वामित्व में हिस्सा बँटाने की अनुमति नहीं देगा। अतएव व्यक्ति को उसके समक्ष अपनी सम्पूर्ण दुर्बलता, खाली हाथ और पूर्ण समर्पण की भावना से प्रस्तुत होना चाहिए, तभी वह तुम्हें सम्पूर्ण संसार के सम्मुख खड़े होने में समर्थ बनाता है, और सभी हानियों से तुम्हारी रक्षा करता है।"[2]

महात्मा गाँधी ईश्वर को विश्वातीत तथा विश्वव्यापी दोनों मानते हैं। वह मनुष्य के अन्दर है और संसार में अन्तर्निहित है, और वह उनके परे भी है। वह सर्वव्यापी सत्ता, सर्वशक्तिमान्, सृष्टिकर्त्ता, पालनकर्त्ता, दयालु तथा न्यायशील है। ईश्वर परम पुरुष है, जो सर्वव्याप्त है। वह संसार में है और उससे परे भी है। ईश्वर विभिन्न धर्मों के देवताओं की अपेक्षा उच्चतर है। गाँधी जी के अनुसार, वह सर्वोच्च शक्ति है।

ईश्वर और अशुभ

महात्मा गाँधी ने ईश्वर को सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सृष्टिकर्त्ता, सत्य और आनन्द मानते हैं। ईश्वर ने संसार में 'अशुभ' की सृष्टि क्यों किया ? यदि ईश्वर सर्वसक्तिमान् है, तब वह 'अशुभ' की अस्तित्व को क्यों स्वीकार करता है ? इस संसार में 'अशुभ' क्यों प्रतिफलित होता है ? ये सभी प्रश्न दार्शनिकों को चकरा देने वाले प्रश्न हैं। महात्मा गाँधी का विचार है कि 'अशुभ' का यथार्थ अस्तित्व है जिससे मनुष्य को अनवरत रूप से संघर्ष करना पड़ता है या इसे पराभूत करना पड़ता है। ईश्वर 'अशुभ' की सृष्टि इसलिए नहीं करता है कि उसका 'अशुभ' अभिप्राय है, अपितु इसलिए कि वह मनुष्यों के द्वारा 'अशुभ' पर आधिपत्य स्थापित करना चाहता है। कष्ट, आतंक तथा निरंकुशता ईश्वर के पहलू हैं। वे उससे सम्बन्धित हैं। वे उसके अंग हैं। 'अशुभ' का उद्देश्य मनुष्य में निश्छलता, ईमानदारी, सच्चाई, अहिंसा, त्याग, ईत्यादि, के लिए उत्साह उत्पन्न करना है, जिसके द्वारा उन्हें 'अशुभ', पाप, कष्ट और क्रूरता से युद्ध करना अपेक्षित है। ईश्वर के मार्ग से हम अनभिज्ञ हैं। मनुष्य 'अशुभ' की सृष्टि करने में उसके वास्तविक प्रयोजन को नहीं जान सकता

१. सपीचेज् एन्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गाँधी, चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ-१०६६.

२. यंग इन्डिया, ३ सितम्बर, १९३१, पृष्ठ ७४७.

Scanned by TapScanner

सदैव अपने अशुभ उद्देश्य, प्रलोभन तथा विचार को बलपूर्वक समाप्त करना पड़ता है एवं उन्हें अपने शुभ विचारों के द्वारा पवित्र करना पड़ता है। ईश्वर और शैतान, कौरव और पाण्डव के बीच हमारे अन्दर सतत् संघर्ष हो रहा है और यह द्वन्द्वयुद्ध मानसिक है, यथार्थ नहीं। गांधी जी कहते हैं, “हमलोग ही विचारों को आश्रय देते हैं, और हमलोग ही उनको बना देते हैं। हमको पुनः-पुनः प्रयत्न करना पड़ता है, इसी कारण संसार में द्वन्द्वयुद्ध है। यह द्वन्द्वयुद्ध काल्पनिक है, वास्तविक नहीं। किन्तु हम इस काल्पनिक द्वन्द्वयुद्ध के अस्तित्व को वास्तविक मानकर ही संसार में अपने को जीवित रख सकते हैं।”[1]

'सत्य' ईश्वर है

गांधी जी के अनुसार, ईश्वर के यथार्थ स्वरूप का वर्णन किसी वस्तु के द्वारा उतने पूर्ण रूप में नहीं होता है जितना 'सत्य' के द्वारा। ईश्वर सृष्टिकर्त्ता, विनाशकर्त्ता, न्यायशील, दयालु, सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान् हो सकता है, किन्तु सर्वोपरि वह सत्य है। हिन्दू धर्म और अन्य धर्म ग्रन्थों में ईश्वर के सहस्रों नाम हैं फिर भी वे सर्वांगीण नहीं हैं। उनके अनुसार ईश्वर सभी वर्णनों के परे, 'सत्य' है। लेकिन बाद में महात्मा गांधी ने कहा कि 'सत्य' ईश्वर है। उनके अनुसार सत्य सर्वोच्च सत्ता है। उनके दृष्टिकोण में यह बुनियादी परिवर्तन एक गहरे दार्शनिक मोड़ को व्यक्त करता है। वह लिखते हैं, “जो कहते हैं, ईश्वर प्रेम है, मैं उनके साथ कहूँगा, ईश्वर प्रेम है। लेकिन मैं अपने गहरे अन्तस्थल में कहा करता हूँ कि यद्यपि ईश्वर सत्ता है, सर्वोपरि वह सत्य है। यदि मानवीय वाणी के लिए पूर्णतम विवरण देना सम्भव हो तो मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ, कि मेरे स्वयं अनुभव के अनुसार ईश्वर सत्य है। लेकिन दो वर्ष पहले, मैं एक कदम आगे बढ़ा और कहा, 'सत्य' ईश्वर है। तुम इन दो उक्तियों के बीच सूक्ष्म अन्तर देखोगे, अर्थात्, ईश्वर 'सत्य' है, और 'सत्य' ईश्वर है। और मैं 'सत्य' के लिए अनवरत तथा कठोर अन्वेषण के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचा, जो लगभग पचास वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ।”[2]

---

१. सी० एस० शुक्ल : मोर कनवर्सेशन्स विध गांधी, पृष्ठ—२.
२. यंग इन्डिया, ३१ दिसम्बर, १९३१, पृष्ठ—४२७।

मेरे दृष्टिकोण में इस परिवर्तन के अनेक कारण हैं। प्रथमतः, अनेक व्यक्ति ऐसे हैं, जो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते फिर भी 'सत्य' की यथार्थता में उनकी दृढ़ आस्था है। ईश्वर में अविश्वास करने वाला भी 'सत्य' की खोज में रहता है। सत्य के उत्साहपूर्ण अन्वेषण में अनीश्वरवादी ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करने में नहीं हिचकता है। सन्देहवादियों का विचार है कि 'सत्य', संसार में सर्वोच्च तत्त्व है तथा वे उसके प्रति दृढ़ रहते हैं। गाँधी जी के अनुसार, अनीश्वरवादी तथा सन्देहवादी जो सत्य पर दृढ़ रहते हैं, उन्हें वास्तव में नास्तिक नहीं माना जा सकता है। ऐसा मनुष्य एक सत्य-भीरू मनुष्य होता है तथा गाँधी जी कहेंगे कि वह एक ईश्वर-भीरू मनुष्य है, क्योंकि 'सत्य' ईश्वर है। चूँकि अनीश्वरवादी और सन्देहवादी सत्य में विश्वास करते हैं, उन्हें नास्तिक नहीं कहा जा सकता है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "सत्य का अन्वेषण करने के अपने आवेग में अनीश्वरवादी स्वयं अपने दृष्टिकोण से यथार्थतः— ईश्वर के अस्तित्व मात्र को अस्वीकार करते हुए नहीं हिचकिचाता है। इसी विचार के कारण मैंने देखा, यह कहने की अपेक्षा कि "ईश्वर 'सत्य' है", मुझे कहना चाहिए कि " 'सत्य' ईश्वर है। " मैं चार्ल्स ब्रैडलॉफ का नाम स्मरण करता हूँ जो स्वयं को एक नास्तिक कहने में प्रसन्न होता था, लेकिन मैं उसके बारे में जो कुछ जानता हूँ, मैं उसे कभी नास्तिक नहीं मानता। मैं उसे ईश्वरभीरू मनुष्य कहता हूँ, यद्यपि मैं जानता हूँ, वह इस दावे को अस्वीकार करता है। उसका चेहरा तमतमा उठता है जब मैं कहता हूँ, "श्रीमान् ब्रैडलॉफ, आप सत्य-भीरू मनुष्य हैं, ईश्वर-भीरू मनुष्य नहीं।" मैं यह कह कर उसकी आलोचना को निरस्त्र कर देता कि सत्य ही ईश्वर है, जैसा कि मैंने अनेक युवकों की आलोचनाओं को निरस्त्र किया है।"[1] हमने लोगों को ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करते हुए जाना है, लेकिन हमारे अनुभव में किसी व्यक्ति ने सत्य को अस्वीकार नहीं किया है। यही कारण है कि हम ईश्वर की अपेक्षा 'सत्य' शब्द का प्रयोग करना पसन्द करते हैं। द्वितीयतः, ईश्वर के नाम पर धर्मान्ध व्यक्तियों के द्वारा अनेक क्रूर कर्म किये गये हैं। एक रूढ़िवादी वर्ग के द्वारा दूसरे धर्म के अनुयायिओं पर किये गये घृणित अपराध, अत्याचार और अधार्मिक व्यवहार ने ईश्वर संबंधी विचार को संकीर्ण कर दिया है। उनका विश्वास है कि उनका ईश्वर दूसरों के ईश्वर से श्रेष्ठ

१. यंग इन्डिया, ३१ दिसम्बर, १९३१, पृष्ठ-४३१०

है। ऐसे मनुष्य अन्य धर्मों के अनुयायिओं को मूर्तिपूजक, नास्तिक, अनीश्वरवादी और काफ़िर कहते हैं। एक सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों के प्रति दूसरे सम्प्रदाय के द्वारा प्रदर्शित नृशंसता और पाशविक व्यवहार उनके धर्मों को अधार्मिक बना देता है। ईश्वर के सही विचार के सम्बन्ध में विवाद किये बिना महात्मा गाँधी ने ईश्वर शब्द की जगह 'सत्य' को स्थानान्तरित किया। इस तरह उन्होंने ईश्वर सम्बन्धी विरोधी तथा भिन्न धारणाओं को अस्वीकार किया और ऐसा दृष्टिकोण अपनाया जो सभी धार्मिक मनुष्यों को मान्य हो सके। यद्यपि विभिन्न धार्मिक मनुष्य ईश्वर की धारणा के सम्बन्ध में असहमत एवं विरोध में रहते हैं वे सत्य के नाम पर एक दूसरे के साथ सहयोग करने में तत्पर रहते हैं। इस दार्शनिक सिद्धान्त के द्वारा महात्मा गाँधी ईसाइयों, मुसलमानों, हिन्दुओं, बौद्धों, जैनों तथा पारसियों में एकता स्थापित कर सके और उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर सके, उनमें एक दूसरे के प्रति प्रेम और आदर उत्पन्न कर सके। वह सार्वजनिक जीवन में प्रत्येक को अपनी धार्मिक निष्ठा में सम्मिलित करने के लिए तत्पर रहते थे। उन्होंने अन्य धर्मों के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को भी स्वीकार किया।

तृतीयतः, विभिन्न धर्मों में ईश्वर के भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। जिस प्रकार वैज्ञानिक, दार्शनिक, सामान्य मनुष्य, न्यूटन, आइन्सटीन, ह्वाइटहेड और तार्किक प्रत्यक्षवादी 'जड़ तत्त्व' के अर्थ के सम्बन्ध में पृथक्-पृथक् विचार प्रस्तुत करते हैं, उनके गुण तथा धारणाएँ पूर्णतया भिन्न हैं, विभिन्न धर्मों के मनुष्यों के अनुसार ईश्वर के भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। कोई मानववादी जो मानव की सेवा करता है, सदैव दृढ़तापूर्वक सत्य का पालन करता है और वैज्ञानिक जिसे प्रकृति के नियमों में दृढ़ विश्वास है, 'ईश्वर' शब्द में विश्वास नहीं कर सकता है, लेकिन वे सभी 'सत्य' में विश्वास करते हैं। अतएव, किसी न किसी अर्थ में वे लोग ईश्वर को स्वीकार करते हैं। जैसा कि डा० दत्त कहते हैं, "मूल्य, श्रद्धा या प्रेम की सर्वोच्च तथ्य के रूप में उनके देवता होते हैं। गाँधी अनीश्वरवादी को भी अपनी धार्मिक परिधि में सम्मिलित करने के लिए तैयार हैं।" परम्परागत् 'ईश्वर' शब्द का परित्याग करके, जिसकी विभिन्न धर्मों में अत्यन्त संकीर्ण गुणवाचकता प्रस्तुत की जाती है, महात्मा गाँधी ने 'सत्य' शब्द का उपयोग किया। गाँधी भी ईश्वर की किसी

---

१. फिलासाफ़ी आफ़ महात्मा गाँधी, पृष्ठ-३६.

Scanned by TapScanner

संकीर्ण धारणा को स्वीकार नहीं करते हैं। वह कहते हैं, "यदि ईश्वर सत्य के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु है, मनुष्य तथा उससे बाहर प्रकाशित निश्चिवाद सत्ता के अतिरिक्त और कुछ है, तो मैं उसकी परवाह नहीं करता हूँ।"[1]

कोई दार्शनिक गाँधी जी के द्वारा प्रस्तुत 'सत्य' के साथ 'ईश्वर' के तादात्म्य के विषय में आपत्ति कर सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि 'सत्य' 'परम सत्ता' नहीं है। 'सत्य' किसी ऐसे तर्कवाक्य या प्रतीक की विशेषता है जो वास्तविक अर्थ को व्यक्त करता है। 'सत्य का अर्थ सामान्यतः तथ्य के साथ विचार की अनुरूपता है।' महात्मा गाँधी के द्वारा किस प्रकार इस मूलभूत भेद की उपेक्षा सम्भव हुई? 'सत्य' एवं 'परम सत्ता' को परस्पर विनिमयशील पद कैसे माना गया? हम देखते हैं कि तर्कशास्त्रज्ञ के लिए जो कठिनाई अत्यन्त सुस्पष्ट है, वह ऋषियों, कवियों और रहस्यवादियों के लिए कठिनाई का विषय ही नहीं है। इन्द्रियानुभूति के स्तर पर ज्ञाता और ज्ञेय, 'ज्ञान की प्रक्रिया' एवं 'ज्ञात' तथ्य में द्वैत है। "इसके अतिरिक्त ज्ञान का उच्चतर स्तर भी है जहाँ ये दोनों संयुक्त हो जाते हैं।"[2]

महात्मा गाँधी और महान् रहस्यवादियों के अनुसार 'ज्ञान' और 'सत्ता' एक है। सभी पैगम्बरों और रहस्यवादियों ने 'ज्ञान' और 'सत्ता' को एक माना है। ईसा मसीह कहते हैं, "तुम सत्य का ज्ञान प्राप्त करोगे, वह सत्य जो तुम्हें मुक्त कर देगा।" उपनिषदों में ईश्वर का वर्णन सत्य, चेतनतत्त्व और आनन्द के रूप में किया गया है, जिससे गाँधी अत्यधिक प्रभावित हुए। ईश्वर सत्ता, चित और आनन्द में प्रकाशित होता है। अतएव, ज्ञान स्वयं ईश्वर है। ईश्वर की चेतना और ईश्वर अभिन्न हैं। सन्त जॉन में ईसा कहते हैं, "मैं मार्ग, सत्य और जीवन हूँ।"

महात्मा गाँधी, ईश्वर को सत्य, प्रेम, नियम तथा अन्तर्चेतना मानते हैं। इस गहनतर अर्थ में ईश्वर और ईश्वर प्रेम, नियम प्रदान

---

१. जे० एच० म्यूरहेड, के निबन्ध द् हिन्दू आइडिया ऑफ ट्रूथ, में महात्मा गाँधी, एसेज् ऐन्ड रिफ्लेक्शन्स् ऑन हिज लाइफ ऐन्ड वर्कस, में प्रकाशित, एस० राधाकृष्णन के द्वारा सम्पादित, जैको पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, द्वितीय संस्करण, १९५७, पृष्ठ-१५५.

२. वही, पृष्ठ—१५५

Scanned by TapScanner

करने वाला और नियम, जो उनके लिए आन्तरिक आवाज या अन्तश्चेतना है, उनमें कोई भेद नहीं है। ईश्वर तथा प्रेम, नीतिशास्त्र एवं नियम में एक एकता एवं तादात्म्य है। ऋषियों एवं रहस्यवादियों के लिए उनके बीच सभी भेद समाप्त हो जाते हैं, और विश्व की सभी क्रियाओं में ईश्वर की अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर होती है। गाँधी कहते हैं, "मेरे लिए ईश्वर सत्य और प्रेम, ईश्वर नीतिशास्त्र एवं नैतिकता, ईश्वर निर्भयता है। ईश्वर प्रकाश एवं जीवन का स्रोत है, और इसके उपरान्त वह इन सभी से ऊपर एवं परे है। ईश्वर अन्तश्चेतना है। वह अनीश्वरवादियों का अनीश्वरवाद भी है। वह वाणी तथा तर्कबुद्धि से परे है। वह उनलोगों के लिए वैयक्तिक ईश्वर भी है, जिन्हें उसके स्पर्श की आवश्यकता है, वह शुद्धतम सार तत्त्व सिर्फ उनके लिए है जो आस्था रखते हैं। वह दीर्घ काल तक कष्ट सहन करने वाला है। वह क्षमाशील है, किन्तु वह उग्र भी है। वह संसार का महानतम लोकतन्त्रवादी है, क्योंकि वह हमें शुभ एवं अशुभ के बीच में चुनाव करने के लिए स्वतंत्र छोड़ देता है। वह सर्वदा सर्वाधिक निरकुंश शासक है, क्योंकि उसने प्रायः हमारे होठों से प्याले को हटाकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया है और उसके स्वतंत्र इच्छा के आवरण में हमारे लिए अपर्याप्त स्थान ही छोड़ा है जिससे कि हमारे मूल्य पर हम सिर्फ उसके आनन्द का विषय हो सके।"[1] उपर्युक्त उदाहरण से भी हम देखते हैं कि गाँधी अपने भावोन्माद में सिर्फ सत्य एवं ज्ञान के साथ ही नहीं, अपितु प्रेम के संवेग, भावानुभूति, वाणी, अन्तश्चेतना के साथ भी ईश्वर की एकता एवं तादात्म्य को देखते हैं। वह कहते हैं, "तब मैंने पाया कि सत्य तक पहुँचने का निकटतम मार्ग प्रेम के माध्यम से है·····जब तुम सत्य को ईश्वर के रूप में पाना चाहते हो, तो एकमात्र साधन प्रेम, अहिंसा है, और चूँकि मैं विश्वास करता हूँ कि अन्ततोगत्वा साधन तथा साध्य समानार्थक पद हैं, मुझे यह कहने में संकोच नहीं करना चाहिए कि ईश्वर 'प्रेम' है।"[2]

महात्मा गाँधी तर्कशास्त्र के सभी सिद्धान्तों का अतिक्रमण कर जाते हैं। उन्हें 'ईश्वर सत्य है' के परिवर्तन 'सत्य ईश्वर है' में कोई कठिनाई नहीं होती है। तर्कशास्त्र के नियमों के अनुसार इसका परिवर्तित वाक्य 'कुछ अवस्थाओं में ईश्वर सत्य है' होगा। किन्तु इस नियम का एक अपवाद

१. यंग इन्डिया, ५ मार्च, १९२५, पृष्ठ—८१।

Scanned by TapScanner

भी है। यदि उद्देश्य तथा विधेय का विस्तार या वस्तुवाचकता समान हो तो ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है जिसमें विधेय सम्पूर्णतः व्याप्त हो जाये। महात्मा गाँधी दोनों शब्दों को समानार्थक पद मानते हैं और वह अपने को सभी तार्किक उलझनों से मुक्त कर लेते हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार 'ईश्वर सत्य है' का अभिप्राय है कि ईश्वर की सत्ता का पूर्वानुमान 'सत्य' में किया जाता है। लेकिन ईश्वर के अस्तित्व का खंडन भी किया जा सकता है, एवं उसकी सत्ता को अस्वीकार किया जा सकता है, उसे अनस्तित्व में परिणत किया जा सकता है, और तब हमारी स्थिति पूर्णतः भिन्न होगी। 'सत्य' इस अस्तित्वहीन ईश्वर की ओर संकेत करेगा जो तर्कवाक्य का उद्देश्य है। उद्देश्य के अनस्तित्व के साथ हमारे तर्कवाक्य का कोई तार्किक महत्त्व नहीं रहेगा। लेकिन कोई भी व्यक्ति इस विश्व में 'सत्य' की प्रामाणिकता के विषय में प्रश्न नहीं करता है। जब महात्मा गाँधी कहते हैं कि 'ईश्वर' 'सत्य' का समानार्थक है तथा 'सत्य' को सार्वभौम रूप से यथार्थ स्वीकार किया जाता है, तब वह इसके माध्यम से ईश्वर की सत्ता को व्यावहारिक रूप से प्रमाणित करते हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार 'सत्य ईश्वर है', इससे स्पष्ट है कि 'सत्य' उपासना की वस्तु है चाहे कोई व्यक्ति हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, ईश्वरवादी या अनीश्वरवादी हो, वह सत्य की उपासना करता है। महात्मा गाँधी ने अपने सम्पूर्ण जीवन पर्यन्त सत्यमय जीवन व्यतीत किया। यद्यपि वे राजनीति की ओर प्रवृत्त हुए जहाँ नेता तुच्छ उपलब्धियों के लिए न्याय के पथ से विचलित हो जाते हैं, वहाँ गाँधी हमेशा धार्मिक रूप से सत्य के ऊपर दृढ़ रहे। उनके अनुसार, सत्य की उपासना का तात्पर्य ब्रह्मचर्य, ईमानदारी, निश्छलता, अहिंसा, सत्यवादिता एवं मानव सेवा के लिए जीवन व्यतीत करना है। ईश्वर की उपासना का उचित तरीका एवं ईश्वर के साक्षात्कार का मार्ग हमारे धर्मपरायण जीवन के माध्यम से 'सत्य' का अनवरत खोज है।

विभिन्न मतों के मनुष्यों को अपनी धार्मिक परिधि में लाने की इच्छा से महात्मा गाँधी ने 'सत्य ईश्वर है' कहना श्रेयस्कर समझा। लेकिन इस कथन से हमें यह विश्वास करने की दिशा में प्रवृत्त नहीं होना चाहिए कि उन्होंने ईश्वर में विश्वास गँवा दिया है। महात्मा गाँधी को ईश्वर में दृढ़ आस्था है। सत्य की शक्ति ने उन्हें राष्ट्र की स्वतंत्रता के गरिमापूर्ण उद्देश्य के लिए जीवन में अधिकतम खतरा उठाने के लिए प्रेरित किया।

Scanned by TapScanner

भी है। यदि उद्देश्य तथा विधेय का विस्तार या वस्तुवाचकता समान हो तो ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है जिसमें विधेय सम्पूर्णतः व्याप्त हो जाये। महात्मा गाँधी दोनों शब्दों को समानार्थक पद मानते हैं और वह अपने को सभी तार्किक उलझनों से मुक्त कर लेते हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार 'ईश्वर सत्य है' का अभिप्राय है कि ईश्वर की सत्ता का पूर्वानुमान 'सत्य' में किया जाता है। लेकिन ईश्वर के अस्तित्व का खंडन भी किया जा सकता है, एवं उसकी सत्ता को अस्वीकार किया जा सकता है, उसे अनस्तित्व में परिणत किया जा सकता है, और तब हमारी स्थिति पूर्णतः भिन्न होगी। 'सत्य' इस अस्तित्वहीन ईश्वर की ओर संकेत करेगा जो तर्कवाक्य का उद्देश्य है। उद्देश्य के अनस्तित्व के साथ हमारे तर्कवाक्य का कोई तार्किक महत्त्व नहीं रहेगा। लेकिन कोई भी व्यक्ति इस विश्व में 'सत्य' की प्रामाणिकता के विषय में प्रश्न नहीं करता है। जब महात्मा गाँधी कहते हैं कि 'ईश्वर' 'सत्य' का समानार्थक है तथा 'सत्य' को सार्वभौम रूप से यथार्थ स्वीकार किया जाता है, तब वह इसके माध्यम से ईश्वर की सत्ता को व्यावहारिक रूप से प्रमाणित करते हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार 'सत्य ईश्वर है', इससे स्पष्ट है कि 'सत्य' उपासना की वस्तु है चाहे कोई व्यक्ति हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, ईश्वरवादी या अनीश्वरवादी हो, वह सत्य की उपासना करता है। महात्मा गाँधी ने अपने सम्पूर्ण जीवन पर्यन्त सत्यमय जीवन व्यतीत किया। यद्यपि वे राजनीति की ओर प्रवृत्त हुए जहाँ नेता तुच्छ उपलब्धियों के लिए न्याय के पथ से विचलित हो जाते हैं, वहाँ गाँधी हमेशा धार्मिक रूप से सत्य के ऊपर दृढ़ रहे। उनके अनुसार, सत्य की उपासना का तात्पर्य ब्रह्मचर्य, ईमानदारी, निश्छलता, अहिंसा, सत्यवादिता एवं मानव सेवा के लिए जीवन व्यतीत करना है। ईश्वर की उपासना का उचित तरीका एवं ईश्वर के साक्षात्कार का मार्ग हमारे धर्मपरायण जीवन के माध्यम से 'सत्य' का अनवरत खोज है।

विभिन्न मतों के मनुष्यों को अपनी धार्मिक परिधि में लाने की इच्छा से महात्मा गाँधी ने 'सत्य ईश्वर है' कहना श्रेयस्कर समझा। लेकिन इस कथन से हमें यह विश्वास करने की दिशा में प्रवृत्त नहीं होना चाहिए कि उन्होंने ईश्वर में विश्वास गँवा दिया है। महात्मा गाँधी को ईश्वर में दृढ़ आस्था है। सत्य की शक्ति ने उन्हें राष्ट्र की स्वतंत्रता के गरिमापूर्ण उद्देश्य के लिए जीवन में अधिकतम खतरा उठाने के लिए प्रेरित किया।

Scanned by TapScanner